साहित्य के रूप

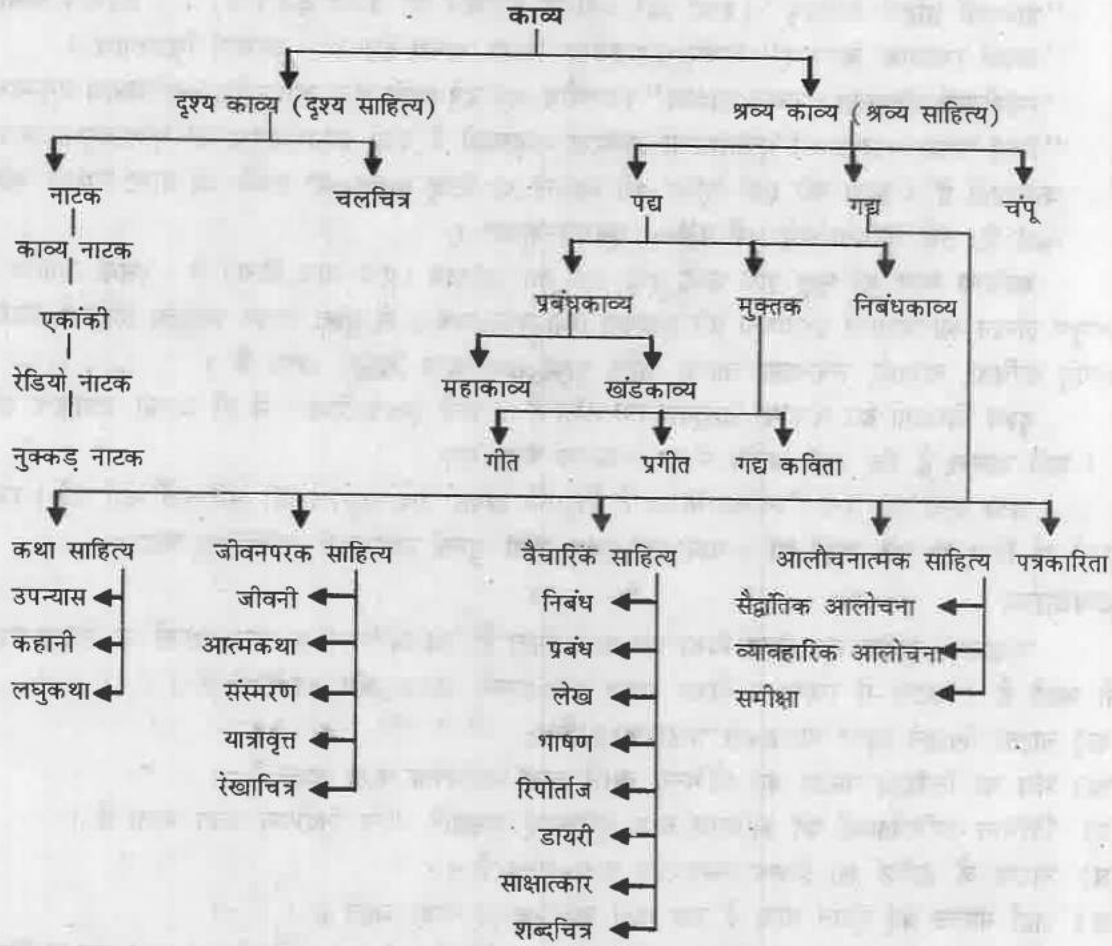

काव्य

संस्कृत साहित्यशास्त्र में **'काव्य'** शब्द संपूर्ण साहित्य का बोध कराता था । वर्तमान में 'काव्य' का अर्थ मात्र कविता तक सीमित हो गया है । केदारनाथ सिंह का काव्य संग्रह कहने का तात्पर्य उनकी कविताओं का संग्रह हैं । उसमें उनकी गद्य रचनाएँ नहीं आ सकतीं । यदि हम कहते हैं कि मुक्तिबोध का समग्र साहित्य वहाँ सुलभ है तो इसमें मुक्तिबोध की कविताओं के अलावा कहानी, आलोचना, डायरी आदि सभी विधाओं की रचनाएँ आ जाएँगी । यदि हम मैथिलीशरण गुप्त का साहित्य कहते हैं तो उसमें उनकी कविताओं के साथ ही पत्र आदि गद्य रचनाएँ, नाटक तथा चंपूकाव्य 'यशोधरा' भी आ जाता है ।

प्राचीन काल में गद्य लिखनेवाले को भी कवि ही कहा जाता था । आधुनिक समय में कवि मात्र कविता लिखने वाले को कहा जाता है । कविता तथा गद्य दोनों लिखने वाले साहित्यकार या लेखक कहलाते हैं। हिंदी में अलग-अलग विधाओं के रचनाकारों के अलग-अलग नाम हैं । जैसे - कवि, कवयित्री, गीतकार, नाटककार, एकांकीकार, कहानीकार, उपन्यासकार, निबंधकार, प्रबंधकार, लेखक, शब्दचित्रकार आदि ।

काव्य की कुछ प्रमुख परिभाषाएँ

1. ''शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्'' (शब्द और अर्थ के सहभाव को काव्य कहते हैं) । - आचार्य भामह ।
2. ''वाक्यं रसात्मकं काव्यम्'' अर्थात (रसात्मक वाक्य काव्य है) । - आचार्य विश्वनाथ ।
3. ''रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्'' (रमणीय अर्थ देने वाला शब्द काव्य है) ।-पंडितराज जगन्नाथ ।
4. ''जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है । हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है, उसे कविता कहते हैं ।'' - रामचंद्र शुक्ल ।

साहित्य शब्द का मूल अर्थ शब्द तथा अर्थ का सहभाव (एक साथ होना) है । इसके अंतर्गत हर अर्थपूर्ण लेखन आ जाता है । भावना की प्रधानता तथा कलात्मकता से युक्त लेखन साहित्य होता है, जिसके अंतर्गत कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि दृश्य तथा श्रव्य विधाएँ आती हैं ।

दृश्य विधाओं का मंच पर प्रस्तुतीकरण होता है । यानी देखने-दिखाने में ही उनकी सार्थकता होती है । यही कारण है कि उन्हें आरंभ में दृश्य काव्य कहा गया ।

श्रव्य शब्द का प्रयोग ध्वनित करता है कि तब छपाई तथा कागज की सुविधाएँ नहीं थीं । रचना सुनाने के लिए ही की जाती थी । यानी जो रचना सुनी-सुनाई जाए उसे श्रव्य कहा गया ।

दृश्यकाव्य

नाटक : नाटक उस दृश्य विधा को कहा जाता है, जो अभिनय के द्वारा दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत की जाती है । नाटक में रचना से लेकर मंचन तक इसके अनेक अंग बन जाते हैं ।

(क) नाटक लिखने वाला नाटककार कहा जाता है ।

(ख) मंच पर लिखित नाटक का अभिनय करने वाला अभिनेता कहा जाता है ।

(ग) विभिन्न अभिनेताओं को अभिनय तथा भूमिकाएँ समझाने वाला निर्देशक कहा जाता है ।

(घ) नाटक के दर्शक को प्रेक्षक (सहृदय) कहा जाता है ।

(ङ) जहाँ नाटक का मंचन होता है उस कक्ष को प्रेक्षागृह कहा जाता है ।

(च) मंच और दर्शक के बीच कपड़े के पर्दे का प्रयोग होता है, जो दृश्य परिवर्तन के साथ उठाया-गिराया जाता है, उसे संस्कृत में यवनिका कहा गया है ।

(छ) मंच के पिछले भाग में स्थाई रूप से एक पर्दा टँगा रहता है, जिसके पीछे के भाग को नेपथ्य कहा जाता है । नेपथ्य में ही अभिनेता अभिनय की तैयारियाँ करते हैं । उस हिस्से को अंग्रेजी में 'ग्रीन रूम' कहा गया है ।

वर्तमान नाटकों में प्रकाश व्यवस्था तथा ध्वनि संयोजन का भी उल्लेखनीय महत्त्व होता है। इसी से नाटकों के मंचन में इनके विशेषज्ञों की आवश्यकता पड़ती है ।

(ज) रेडियो नाटक तथा चलचित्र में यंत्रों के संचालक की भूमिका प्रधान हो जाती है । चलचित्र में

छायाकार तथा रेडियो नाटक में रिकॉर्डिंग करने वाले प्रमुख होते हैं ।

नाटक के तत्त्व

नाटक के छह तत्त्व होते हैं – 1. कथावस्तु, 2. पात्र, 3. कथोपकथन (संवाद), 4. देशकाल, 5. भाषाशैली, 6. उद्देश्य ।

1. **कथावस्तु :** कथावस्तु उस मूल बिंदु (घटना) को कहा जाता है, जिसे नाटककार अपनी रचना का आधार बनाता है । कथावस्तु को पाठक या प्रेक्षक तक पहुँचाना नाटककार का उद्देश्य होता है । नाटक का यह पहला तत्त्व होता है । इसे कथानक भी कहा जाता है ।

2. **पात्र :** नाटक का दूसरा तत्त्व पात्र होता है । बिना किसी पात्र के कोई कथा बन ही नहीं सकती । कथावस्तु का केंद्र कोई घटना होती है । उसे घटित होने या विकसित होकर कथा का रूप धारण करने के लिए प्रत्यक्ष, परोक्ष, चेतन, जड़, सजीव या निर्जीव यानी किसी तरह के पात्र या पात्रों की अनिवार्य आवश्यकता होती है । पात्रों में नायक, नायिका, सहनायक तथा प्रतिनायक प्रमुख होते हैं । नाटक के प्रमुखतम पात्र को नायक या नायिका कहा जाता है । नाटक के अंतिम फल का भोक्ता नायक ही होता है । हिंदी में अनेक नायिका प्रधान नाटकों की भी रचनाएँ हुई हैं । सहनायक उस पात्र को कहा जाता है जो नाटक में दूसरा महत्त्वपूर्ण पात्र तथा नायक का सहयोगी होता है । नाटक में इसका होना अनिवार्य नहीं होता । प्रतिनायक उस पात्र को कहा जाता है, जो नायक के विरुद्ध स्वभाव, दर्शन तथा आचरण वाला हो ।

3. **कथोपकथन :** नाटक का तीसरा तत्त्व कथोपकथन होता है । कथा विकास में इस तत्त्व का उल्लेखनीय महत्त्व होता है । इसे संवाद भी कहा जाता है । इसके दो भेद हैं – **प्रकट** तथा **स्वगत** । नाटक में पात्रों की सोच को भी अभिनेता बोलकर ही प्रेक्षक (दर्शक) तक पहुँचाता है । ये संवाद ही स्वगत कहे जाते हैं । तात्पर्य यह कि पात्रों के प्रकट कथोपकथनों (कथन+उपकथन) को प्रकट संवाद कहा जाता है और उनकी सोच को स्वगत ।

4. **देशकाल :** नाट्याचार्यों ने देशकाल यानी स्थान तथा समय को नाटक के चौथे तत्त्व के रूप में स्वीकार किया है । कथानक के घटित-विकसित होने के लिए किसी स्थान और समय की अनिवार्यता होती है । इन दो के अभाव में कोई कथानक संभव नहीं हो सकता और जब कथानक संभव नहीं होगा तो नाटक की रचना भी अकल्पनीय हो जाएगी । ये स्थान और समय भी एक हो सकते हैं और प्रसंग के अनुसार अनेक भी । परंतु कथानक तथा पात्रों के साथ उनकी अन्विति आवश्यक होती है । यानी इन अन्य तत्त्वों से देशकाल का स्वाभाविक संबंध होना आवश्यक होता है । देशकाल की असंबद्धता नाटक में दोष पैदा कर देती है ।

5. **भाषा-शैली :** नाटक का पाँचवाँ तत्त्व भाषा-शैली को माना गया है । नाटकों के मंचन के लिए भाषा-शैली माध्यम की भूमिका निभानेवाला अनिवार्य तत्त्व सिद्ध होती है । देशकाल एवं प्रसंग आदि के अनुसार इस तत्त्व में स्वाभाविक विविधताएँ होती हैं । प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल तक नाटकों की भाषा ही नहीं, शैलियों में भी अनेक परिवर्तन हुए हैं । एक भाषा में लिखित तथा मंचित अनेक नाटकों में शैलीगत भिन्नताएँ दिखाई पड़ती हैं । एक भाषा में भी शब्द-प्रयोग तथा वाक्यों की भंगिमाओं के अनेक रूप दिखाई पड़ते हैं । जयशंकर प्रसाद तथा मोहन राकेश के नाटक हिंदी भाषा में लिखित हैं और मंचित भी होते हैं । परंतु दोनों की शैली ही नहीं, भाषा-रूप में भी अंतर स्पष्ट देखे जा सकते हैं ।

6. **उद्देश्य :** उद्देश्य को आचार्यों ने नाटक का छठा तत्त्व बताया है । उद्देश्य का नाटक के विभिन्न तत्त्वों पर गहरा प्रभाव पड़ता है । उद्देश्य की यथार्थता, प्रासंगिकता, आधुनिकता आदि का नाटक की रचना पर प्रभाव पड़ता है । नाटककार के दर्शन तथा दृष्टिकोण के अनुसार नाटकों के उद्देश्य निर्धारित होते हैं ।

नाटक के अनेक रूप हैं - (क) काव्यनाटक, (ख) रेडियोनाटक, (ग) एकांकी, (घ) नुक्कड़ नाटक आदि ।

(क) काव्यनाटक : काव्यनाटक उसे कहा गया है जिसके सारे संवाद पद्यात्मक होते हैं । केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' का 'संवर्त्त', धर्मवीर भारती का 'अंधायुग' और रामेश्वर सिंह 'काश्यप' का 'समाधान' या 'नीलकंठ निराला' काव्य नाटक हैं ।

(ख) रेडियोनाटक : रेडियोनाटक दृश्यकाव्य का एक ऐसा भेद होता है, जो दृश्य नहीं; श्रव्य होता है । इसमें अभिनेता को अपने संवादों द्वारा ही पूरा कथ्य व्यंजित करना पड़ता है । इसमें न मंच होता है, न यवनिका और न ही नेपथ्य या प्रेक्षागृह । इसमें अलग से प्रकाश व्यवस्था की भी आवश्यकता नहीं होती, किंतु ध्वनि व्यवस्था सटीक होती है ।

रेडियो नाटक में स्वगत का महत्त्व विशेष बढ़ जाता है । रेडियो नाटक की एक विशेषता यह भी होती है कि अभिनेताओं की एक प्रस्तुति की रिकॉर्डिंग करके उसे संगृहीत कर लिया जा सकता है और अनेक बार उसका प्रसारण किया जा सकता है ।

(ग) एकांकी : दृश्य काव्य का दूसरा सबसे महत्त्वपूर्ण भेद एकांकी है । इस विधा में भी नाटकवाले छह तत्त्व – वस्तु, पात्र, कथोपकथन, देशकाल, शैली, उद्देश्य अनिवार्य होते हैं । इन सारे तत्त्वों के संघटन से जो नाट्य रचना एक अंक में ही पूर्ण हो जाती है, उसे एकांकी कहा जाता है । इसमें एक अंक का होना अनिवार्य है, परंतु इसमें दृश्य अनेक हो सकते हैं ।

नाटक तथा नाट्यशास्त्र ये दोनों संस्कृत साहित्य की अति प्राचीन विधाएँ हैं, परंतु एकांकी हिंदी साहित्य के आधुनिक काल की देन है । कहानी की भाँति एकांकी में भी एक घटना की केंद्रीयता होती है और एक ही कथा विकास उद्देश्य तक पहुँच जाता है । राम कुमार वर्मा, भुवनेश्वर, धर्मवीर भारती, मोहन राकेश, देवेंद्रनाथ शर्मा, विष्णु प्रभाकर आदि हिंदी के श्रेष्ठ एकांकीकार माने गए हैं ।

(घ) नुक्कड़ नाटक : नुक्कड़ नाटक एक आधुनिकतम विधा है । इसे एकांकी का पूर्णत: मंचमुक्त सरल रूप कहा जा सकता है । इसमें प्रस्तुतीकरण मंच, परदा, माइक आदि से पूर्णत: मुक्त हो जाता है । निर्देशक किसी भी मोड़ या अन्य खुली जगह पर अपने अभिनेताओं को खड़ा कर अभिनय कराना प्रारंभ कर देता है । उनके साथ ढोलक-हारमोनियम जैसे कुछ वाद्य यंत्र होते हैं, परंतु शिल्प की दृष्टि से उनकी भी इसमें अनिवार्यता नहीं है ।

नुक्कड़ नाटक सोद्देश्य प्रस्तुतीकरण के आधुनिकतम माध्यम हैं । आठवें दशक में राजनीति से प्रेरित नाट्य संस्थाओं ने सामाजिक खामियों के विरुद्ध जनजागरण के लिए नुक्कड़ नाटक की प्रस्तुतियों के अनेक सफल तथा प्रशंसनीय उदाहरण प्रस्तुत किए ।

नुक्कड़ नाटक मूलत: एकांकी नाटक ही होते हैं । इसमें दृश्य भी अनिवार्यत: एक ही होता है । इसमें अभिनेता अपने स्वाभाविक परिधान में होते हैं ।

चलचित्र

चलचित्र एक आधुनिक कला माध्यम है । बीसवीं शताब्दी में मनोरंजन एवं ज्ञान के साधन के रूप में इसने विशेष ख्याति प्राप्त की है । इस दृष्टि से, भारत जैसे देश में जहाँ अशिक्षा और गरीबी बहुत अधिक है, इसका महत्त्व निर्विवाद है । चलचित्र के निर्माण एवं पूरी संकल्पना में अनेक व्यक्तियों का योगदान होता है । निर्माता, निदेशक, अभिनेता, पटकथा लेखक, गीतकार, कैमरामैन आदि से लेकर स्पॉट ब्वॉय तक की इसमें भूमिका होती है ।

जिस तरह कोई लेखक कहानी की रचना करता है, चलचित्र रचयिता चलचित्र का । इस कार्य में बिंब (इमेज) और शब्द (साउंड) उसकी भाषा का कार्य करते हैं । एक कल्पनाशील एवं मौलिक निर्देशक चलचित्र के जरिए अपने समय से सार्थक संवाद करता है एवं समाज को दिशा देने की कोशिश करता है । चलचित्र एवं साहित्य दोनों एक-दूसरे से प्रेरणा ग्रहण करते हैं । हिंदी के प्रसार में चलचित्रों की उल्लेखनीय भूमिका है । दिगंत 'भाग-1' में चलचित्र पर महान फिल्म निर्देशक सत्यजित राय का पाठ संकलित है । इस पाठ के द्वारा आप चलचित्र के संबंध में अपनी समझ विकसित कर सकते हैं ।

श्रव्यकाव्य

वर्तमान हिंदी साहित्य तथा हिंदी साहित्यशास्त्र में पद्य, काव्य तथा कविता प्रायः एक दूसरे के पर्याय हैं । साहित्यशास्त्र में छंदोबद्ध रचना को पद्य कहा जाता है । छंदोबद्ध रचना वह है जो गण, वर्ण, मात्रा आदि के निर्धारित नियमों के अनुसार हो । मात्रिक या वर्णिक इन दो में एक का होना उसके लिए अनिवार्य होता है । पद्य रचना निर्विवाद रूप से काव्य नहीं होती है । आयुर्वेद, ज्योतिष आदि के ग्रंथ भी पदबद्ध हैं, पर वे काव्य नहीं कहे जा सकते । ऐसा संभव है कि पद्य रचना में काव्यत्व कमजोर हो, परंतु है वह कविता ही । इसके दो भेद होते हैं - (क) प्रबंध काव्य और (ख) मुक्तक काव्य ।

प्रबंधकाव्य : प्रबंध उस काव्यात्मक रचना को कहा जाता है, जिसकी प्रत्येक पंक्ति और छंद में पूर्वापर संबंध हो । इस तरह यह रचना कथात्मक हो जाती है । प्रकारांतर से कह सकते हैं कि कथात्मक काव्य रचना प्रबंध काव्य होती है । प्रबंध में वर्णित कथा दीर्घ तथा अनेक सर्गों में बँटी होती है । 'रामचरितमानस', 'पद्मावत', 'रामचंद्रिका', 'साकेत', 'कामायनी', 'जयद्रथवध','रश्मिरथी' आदि प्रबंधकाव्य के उदाहरण हैं । इसके भी दो भेद होते हैं - (क) महाकाव्य और (ख) खंडकाव्य ।

महाकाव्य : यह काव्य साहित्य की एक सम्मानित विधा है । आचार्य भामह (पाँचवीं शती) ने अपने ग्रंथ 'काव्यालंकार' सूत्र में कहा है कि "लंबे कथानकवाला, महान चरित्रों पर आश्रित, नाटकीय पंचसंधियों से युक्त, उत्कृष्ट और अलंकृत शैली में लिखित तथा जीवन के विविध रूपों और कार्यों का वर्णन करने वाला सर्गबद्ध सुखांत काव्य ही महाकाव्य होता है ।"

संस्कृत में वाल्मीकीय 'रामायण', कालिदास का 'रघुवंश', हर्ष का 'नैषधचरित' आदि प्रमुख महाकाव्य हैं । हिंदी में चंदवरदायी का 'पृथ्वीराज रासो', जायसी का 'पद्मावत', तुलसीदास का 'रामचरितमानस', केशवदास की 'रामचंद्रिका', मैथिलीशरण गुप्त का 'साकेत', जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' आदि प्रमुख महाकाव्य हैं ।

खंडकाव्य : प्रबंधकाव्य का दूसरा भेद खंडकाव्य होता है । इसे खंडप्रबंध भी कहा जाता है । वस्तुतः यह किसी विस्तृत समग्र कथा का खंड (या अंश) मात्र होता है । विस्तृत महाकाव्यात्मक विषयवस्तु

में जीवन को संपूर्णता में प्रस्तुत किया जाता है जिसमें अनेक प्रासंगिक लघु कथानक, प्रसंग आदि सन्निहित होते हैं । वैसे ही किसी एक केंद्र वाली लघु विषयवस्तु की मार्मिकता, संदेशात्मकता आदि को उद्देश्य बनाकर प्रस्तुत प्रबंधात्मक रचना को खंडकाव्य कहा जाता है । हिंदी के प्रसिद्ध खंडकाव्य 'जयद्रथवध' (मैथिलीशरण गुप्त) का प्रसंग महाभारत नामक विस्तृत महाकाव्य की एक छोटी प्रासंगिक कथा है, जिसमें अभिमन्यु की वीरता और अर्जुन की प्रतिज्ञापूर्ति की कथा प्रस्तुत की गई है । धर्मवीर भारती की 'कनुप्रिया', कुँवरनारायण का 'आत्मजयी' आदि आधुनिक युग के खंडकाव्य हैं । रामनरेश त्रिपाठी के 'पथिक', 'स्वप्न' और गोपालसिंह 'नेपाली' के 'पंछी' नामक खंडकाव्य के रूप में काल्पनिक कथावस्तु तथा चरित्र वाले खंडकाव्य के उदाहरण भी हिंदी प्रबंधकाव्य में सुलभ हो चुके हैं ।

'पंचवटी' (गुप्तजी), 'रश्मिरथी' (दिनकर), 'कर्ण' (केदारनाथ मिश्र 'प्रभात'), 'भस्मांकुर' (नागार्जुन) आदि खंडकाव्य के उदाहरण हैं ।

मुक्तक : साहित्यशास्त्रियों ने मुक्तक को अनिबद्ध या निर्बंध काव्य भी कहा है । एक छंद में किसी भावदशा या विचार विशेष की काव्यात्मक अभिव्यक्ति को मुक्तक कहा जाता है । इसमें कोई कथा नहीं होती । विद्यापति, कबीर, सूर, तुलसी, मीरा आदि के पद तथा कबीर, तुलसी, रहीम, बिहारी आदि के दोहे मुक्तक के आदर्श उदाहरण हैं ।

मुक्तक में गेयता, भावात्मकता तथा वैचारिकता के अंतर देखे जाते हैं । इस आधार पर इसके तीन भेद – गीत, प्रगीत और गद्यकविता के रूप में देखे जाते हैं ।

गीत : भावात्मक सघनता का उद्रेक जब अभिव्यक्ति में लयात्मकता तथा स्वर-संगति प्राप्त कर लेता है तो उसे गीत की संज्ञा मिलती है ।

गीत का मौलिक स्वरूप लोकगीतों के विभिन्न रूपों में प्रकट होता है । संगीतशास्त्र और साहित्यिक अर्थगर्भत्व की युक्तता से वह साहित्यिक गीत विधा का रूप प्राप्त करता है । भावात्मक केंद्रीयता गीत की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता होती है । आदिकाल तथा मध्यकाल में गीत प्राय: पद के रूप में लिखे गए थे । विद्यापति, कबीर तथा सूर के तो अधिकांश पद गीतात्मक उद्देश्य से ही लिखे गए थे । उनके पदों में विभिन्न रागों का निर्देश भी मिलता है ।

इस संदर्भ में ध्यान यह रखना है कि छंदों की भी अपनी लय होती है, परंतु उसके आधार पर उन्हें गीत नहीं कहा जा सकता ।

विद्यापति, कबीर, सूर, तुलसी, मीरा आदि के गीतों में भी लोकचेतना का महत्त्वपूर्ण अंश परिलक्षित होता है । आधुनिक हिंदी काव्य में भारतेंदु हरिश्चंद्र के बाद छायावादी कवियों ने अनेक गीतों की रचनाएँ कीं । नई कविता काल में नवगीत का विकास हुआ और सातवें-आठवें दशक में जनगीत नाम से एक अलग धारा विकसित हुई ।

गीत में भाव तत्त्व प्रमुख होता है । उसके साथ कल्पना तत्त्व का संतुलन भी आवश्यक होता है । बुद्धि तत्त्व की पुष्टि उसे साहित्यिक गंभीरता तथा शास्त्रीयता प्रदान करती है ।

गीत के ही एक बहुप्रचलित रूप लोकगीत हैं । ये लौकिक जीवन के विभिन्न उत्सवों, यथा- जन्म, जनेऊ, विवाह आदि संस्कारों पर गाए जाते हैं । गोचारण तथा जाँते में अन्न पीसने के समय में भी वे गीत

गाए जाते हैं । सोहर, झूमर, भजन, खिलौना, साँझा-पराती, गोड़धोआई, गाली, विदाई, जँतसार लोकगीत के विभिन्न प्रमुख भेद हैं । ये अधिकांश लोकभाषाओं में ही मिलते हैं ।

प्रगीत : आधुनिक हिंदी काव्य में छायावादी धारा के साथ मुक्तक ने एक नए स्वरूप में विकास पाया । निराला की 'जुही की कली', 'तोड़ती पत्थर', 'भिक्षुक' आदि कविताओं में पारंपरिक प्रबंध तथा मुक्तक के पद, गीत, भजन आदि से भिन्न एक नया स्वरूप दिखाई पड़ा था, जिसमें वैचारिकता की प्रधानता लिए एक समग्र बिंब प्रस्तुत हुआ था । निश्चय ही वे कविताएँ 'मधुबन तुम कत रहत हरे' या 'रहिमन पानी राखिए' अथवा निराला के ही 'वर दे वीणावादिनी', 'भारति जय विजय करे' से भिन्न एकल बिंब के रूप में प्रस्तुत थीं । नई कविता काल तक आते-आते वह हिंदी कविता (मुक्तक वर्ग) का प्रमुख स्वरूप बन गया । नामवर सिंह ने प्रगीत के संबंध में कहा है कि ''प्रगीत उस कविता को कहा गया है, जिसमें कवि की अनुचिंतनात्मक अभिव्यक्ति प्रमुख होती है ।'' 'प्रगीत' के संबंध में नामवर सिंह का पाठ 'प्रगीत और समाज' आपकी पाठ्यपुस्तक 'दिगंत' भाग - 2 में संकलित है । इस पाठ में प्रगीत के संबंध में विस्तार से बताया गया है ।

गद्य कविता : हिंदी में 'गद्यकाव्य' तो पुराना है जो वस्तुतः कविता नहीं गद्य का ही एक रूप हुआ करता था, किंतु 'गद्यकविता' नई है और पिछले पंद्रह-बीस वर्षों में अनेक कवियों द्वारा पर्याप्त संख्या में लिखी गई है । फ्रांसीसी, अंग्रेजी आदि यूरोपीय भाषाओं में नए ढंग की इस गद्यकविता का लेखन बीसवीं शती के पूर्वार्ध, विशेषकर द्वितीय विश्वयुद्ध के समय से ही, होता रहा है । फ्रांसीसी कवि सेंट जॉन पर्स की ऐसी गद्य कविताएँ टी० एस० एलियट के द्वारा लंबी भूमिका के साथ पेश की गई हैं किंतु वे आकार में बहुत लंबी हैं । छोटी गद्य कविताएँ, खासतौर पर हिंदी में, बहुत नई हैं और इनका विशिष्ट रूप और आकार प्रकार समसामयिक अनुभव की विलक्षण विशिष्टता में निहित हैं ।

चंपूकाव्य

चंपूकाव्य उसे कहते हैं जिसमें पद्य, गद्य तथा नाटक तीनों से युक्त मिश्रित शैली का प्रयोग होता है । चंपू काव्य प्राचीन संस्कृत साहित्यशास्त्र में उल्लिखित होता रहा है । हिंदी में इसका आदर्श उदाहरण मैथिलीशरण गुप्त की 'यशोधरा' जैसी लोकप्रिय कृति है ।

गद्य साहित्य

हिंदी में गद्यलेखन की वास्तविक शुरुआत भारतेंदु युग से होती है । नवजागरणकालीन चेतना के विस्तार, प्रेस के आगमन और तत्कालीन परिस्थितियों ने गद्यलेखन के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई । आरंभ में नाटक, निबंध और उपन्यास लिखे गए । धीरे-धीरे हिंदी में कहानी एवं अन्य सर्जनात्मक गद्यलेखन का भी विकास हुआ ।

कथा साहित्य

कथा साहित्य के मूल में कोई घटना प्रधान कथा होती है । उस घटना के विवरण या संदेश को श्रोता या पाठक तक उद्देश्य विशेष से पहुँचाने का कार्य वक्ता या लेखक करता है । श्रोता या पाठक के समक्ष वह उस विवरण को जिस रूप में रखता है, उसे ही कथा कहते हैं । आकार और प्रकृति भेद से इसके अनेक नाम और रूप विकसित हुए हैं । इनमें उपन्यास तथा कहानी विधाएँ हैं ।

उपन्यास : साहित्य की यह आधुनिक विधा है । उपन्यास के छह तत्त्व हैं - कथावस्तु, पात्र, कथोपकथन, देशकाल, शैली और उद्देश्य ।

हिंदी साहित्य में उपन्यास लेखन का प्रारंभ भारतेंदु युग से माना जाता है । हिंदी का पहला उपन्यास लाला श्रीनिवास दास द्वारा लिखित 'परीक्षागुरु' है ।

विषय के आधार पर उपन्यास के अनेक रूप विकसित हुए हैं जिनमें प्रमुख हैं - **1. तिलस्मी उपन्यास, 2. जासूसी उपन्यास, 3. ऐतिहासिक उपन्यास, 4. पौराणिक उपन्यास, 5. सामाजिक उपन्यास**। इसी तरह शैली की दृष्टि से उपन्यास की रचना में वर्णननात्मक, आत्मकथात्मक, पत्र शैली, डायरी शैली और गल्प शैली या किस्सागोई की शैली प्रमुख है ।

हिंदी के तिलस्मी तथा जासूसी उपन्यासकारों में देवकीनंदन खत्री, किशोरीलाल गोस्वामी और गोपालराम गहमरी के नाम प्रमुख हैं । ऐतिहासिक उपन्यासकारों में वृंदावनलाल वर्मा तथा आचार्य चतुरसेन शास्त्री के नाम प्रमुख हैं । हजारीप्रसाद द्विवेदी के **ऐतिहासिक उपन्यासों** में ऐतिहासिक तथ्यों पर उनकी विराट सांस्कृतिक चेतना का विशेष दबाव देखा जा सकता है, इसलिए कुछ विद्वान उन्हें ऐतिहासिक उपन्यासकार नहीं मानते हैं ।

मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर चरित्र तथा मानसिक व्यापारों का विश्लेषण जिन उपन्यासों में प्रस्तुत होता है, उन्हें मनोवैज्ञानिक उपन्यास कहा गया है । हिंदी में जैनेंद्र तथा अज्ञेय के उपन्यासों को सफल मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के रूप में प्रतिष्ठा मिली है । नरोत्तम नागर तथा इलाचंद जोशी इस वर्ग के अन्य प्रमुख नाम हैं । उपन्यास साहित्य की मुख्य धारा सामाजिक उपन्यासों की ही रही है । समाज के समग्र स्वरूप की मूलभूत समस्याओं को विषय बनाकर जो औपान्यासिक सृजन होता है, उसे सामाजिक उपन्यास कहा जाता है । चूँकि इसका विषय क्षेत्र व्यापक होता है, इसलिए इसके स्वरूप में भी अपेक्षाकृत अधिक विविधता देखी जाती है । इसके अंतर्गत राजनीतिक तथा पारिवारिक संदर्भ भी आ जाते हैं । प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, यशपाल, फणीश्वरनाथ रेणु, कमलेश्वर, अमृतलाल नागर, निर्मल वर्मा, विनोद कुमार शुक्ल आदि इस धारा के प्रमुख उपन्यासकार माने जाते हैं ।

फणीश्वरनाथ रेणु के 'मैला आँचल' नामक उपन्यास का प्रकाशन 1954 में हुआ था । इस उपन्यास के साथ हिंदी उपन्यास साहित्य में 'आंचलिक उपन्यास' नामक एक नई धारा का प्रारंभ हुआ । 'मैला आँचल' में पूर्णिया जिले के क्षेत्रीय परिवेश के बीच के लोकजीवन को विषय बनाया गया था । इस धारा की विशेषता यह रही कि उपन्यास में उस अंचल विशेष के लोकजीवन के विविध संस्कारों तथा उनकी प्रवृत्तियों का परिचय यथार्थ रूप में उभरकर सामने आता है । सन् 1928 में प्रकाशित शिवपूजन सहाय के उपन्यास 'देहाती दुनिया' में आंचलिक उपन्यास की विशेषताएँ देखी गई थीं परंतु इस धारा का प्रारंभ और विकास 'मैला आँचल' से ही माना जाता है ।

कहानी : कहानी के भी छह तत्त्व हैं - कथावस्तु, पात्र, कथोपकथन, देशकाल, शैली और उद्देश्य ।

गल्प, आख्यायिका, कथा आदि नामों से इसके कुछ भिन्न रूप संस्कृत तथा प्राकृत, अपभ्रंश आदि प्राचीन भाषाओं में विकसित हुए थे, परंतु इसका आधुनिक स्वरूप निश्चय ही पाश्चात्य शार्ट स्टोरी के अधिक निकट है ।

इसे बाँग्ला में आज भी गल्प कहा जाता है । कहानी की विशेषता यह होती है कि उसमें एक ही कथावस्तु विकसित होती हुई अपने लघु आकार में ही पूर्णता प्राप्त कर लेती है । इसे उपन्यास का खंड नहीं कहा जा सकता ।

चंद्रधरशर्मा 'गुलेरी', प्रेमचंद, प्रसाद, जैनेंद्र, अज्ञेय, यशपाल, रेणु, निर्मल वर्मा, मोहन राकेश, अमरकांत, कृष्णा सोबती, मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, काशीनाथ सिंह, ज्ञानरंजन, उदय प्रकाश आदि हिंदी कहानी के प्रमुख हस्ताक्षर हैं ।

लघुकथा : लघुकथा कथा साहित्य का सबसे छोटा रूप है । हिंदी साहित्य की नवीनतम विधाओं में यह एक है ।

लघुकथा वह कथात्मक विधा है जिसमें वस्तु और उद्देश्य तत्त्व अधिकतम प्रमुखता प्राप्त कर घने बादलों के बीच बिजली की चमक की भाँति कथ्य की मार्मिकता व्यंजित कर जाते हैं । इसमें कथोपकथन की नाटकीयता, देशकाल के वर्णन और भाषा-शैली के चमत्कार प्रदर्शन का अवसर एकदम नहीं मिलता ।

जीवनी : किसी महान व्यक्ति के समग्र जीवन से संबंधित उल्लेखनीय प्रसंगों, उसके कार्यों तथा उसकी विचारधाराओं का सोद्देश्य तथा सुसंबद्ध साहित्यिक प्रस्तुतीकरण जीवनी कहा जाता है । जीवनी अनिवार्यतः शतप्रतिशत यथार्थ वृत्तों से युक्त होती है । अनुमान तथा लोकश्रुति के आधार पर उल्लिखित तथ्य भी काल्पनिक नहीं होते । जीवनी के बाह्य चित्रण चरितनायक के व्यक्तित्व की आंतरिक विशेषताओं के प्रमाण के रूप में उल्लेख पाते हैं । इसमें लेखक के अपने अनुभूत तथ्य भी हो सकते हैं और पुस्तकों या अन्य लोगों से प्राप्त विवरण भी । जीवनी को अंग्रेजी में बायोग्राफी कहा गया है । विष्णु प्रभाकर द्वारा लिखित शरत्चंद्र की जीवनी 'आवारा मसीहा', रामविलास शर्मा की 'निराला की साहित्य साधना' और अमृतराय द्वारा लिखी गई 'कलम का सिपाही' नामक प्रेमचंद की जीवनी को खूब प्रसिद्धि मिली है ।

आत्मकथा : आत्मकथा एक ऐसी विधा है, जिसमें लेखक अपनी जीवनयात्रा के विशिष्ट प्रसंगों तथा अनुभवों को सुसंबद्ध कथात्मक स्वरूप प्रदान करता है । वैयक्तिक साहित्यिक विधाओं में आत्मकथा सबसे अधिक प्रामाणिकता रखती है । आत्मकथा में लेखक के जीवन की घटनाओं का विवरण (जन्म, विवाह, नौकरी आदि का) होना अर्थ रखता है, परंतु लेखक उनका उपयोग किसी न किसी तथ्य को सार्थकता देने के लिए करता है ।

आत्मकथा की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि लेखक अपने जीवन, विचार और कार्यों को इतना महत्त्वपूर्ण मानता है कि स्वयं उसका आलेखन अपने वर्तमान युग के समक्ष करने का खतरा उठाता है । यही कारण है कि उसे पूर्ण निर्लिप्त तटस्थता बरतनी पड़ती है । लेखक अपनी आत्मकथा में जितना तटस्थ रह पाता है उसकी आत्मकथा की प्रामाणिकता उतनी ही बढ़ती है । पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' की 'अपनी खबर', शिवपूजन सहाय की 'मेरा जीवन', हरिवंश राय बच्चन की 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ', राहुल सांकृत्यायन की 'जीवन यात्रा' आदि आत्मकथाओं को काफी प्रसिद्धि मिली ।

संस्मरण : व्यक्तिकेंद्रित स्मृतिमूलक विधाओं में संस्मरण का उल्लेखनीय स्थान है । यह भी एक आधुनिक विधा है ।

किसी महान व्यक्तित्व से संबंधित स्वानुभूत तथ्यों का संवेदनशीलता से परिपूर्ण गद्यात्मक

प्रस्तुतीकरण संस्मरण कहलाता है । संस्मरण कथा और निबंध के बीच की विधा सिद्ध होता है क्योंकि इसमें लेखक को एक सीमा तक वैचारिक अभिव्यक्ति की भी छूट रहती है । इसका ही एक अन्य रूप श्रद्धांजलि है, जो किसी महान व्यक्तित्व की मृत्यु के उपरांत लिखी जाती है । हिंदी में व्यक्तिकेंद्रित संस्मरण की ही परंपरा विकसित हुई है ।

रेखाचित्र : रेखाचित्र वह गद्य विधा है, जिसमें लेखक प्राय: किसी अत्यंत साधारण स्तर के व्यक्ति की कुछ असाधारण चारित्रिक विशेषताओं का चित्रण करता है । पूरी तरह चरित्रप्रधान विधा होने के कारण यह संस्मरण के अत्यधिक निकट पड़ती है । संस्मरण का नायक अपनी महानता में उल्लेखनीय होता है जबकि रेखाचित्र के नायक की चारित्रिक उल्लेखनीयता उसकी साधारणता में ही निहित होती है ।

रेखाचित्र में नायक के व्यक्तित्व की यथार्थ विशेषताओं के विश्लेषण तथा प्रस्तुतीकरण में लेखक अपनी वैचारिकता का पूरा उपयोग करता है, इसलिए इसका उद्देश्य पक्ष अधिक महत्त्वपूर्ण हो आता है । इस तरह इसमें संस्मरण के साथ निबंध की विशेषताएँ भी आ जाती हैं । बावजूद इसके, रेखाचित्र में लेखकीय संवेदनशीलता की भूमिका विशेष महत्त्वपूर्ण बन जाती है । हिंदी में बनारसीदास चतुर्वेदी, महादेवी वर्मा, रामवृक्ष बेनीपुरी, विष्णु प्रभाकर आदि महत्त्वपूर्ण रेखाचित्रकार हैं ।

रेखाचित्र, शब्दचित्र तथा वैयक्तिक निबंध में स्पष्ट अंतर है ।

शब्दचित्र : शब्दचित्र विचारमूलक कलात्मक गद्य विधाओं में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है । जैसा कि नाम से ही स्पष्ट होता है, इसमें लेखक का उद्देश्य वर्णन नहीं, बल्कि चित्रण होता है । रेखाचित्र में चरित्र और कथा के संदर्भ होते हैं, किंतु शब्दचित्र में नहीं । उपयुक्त शब्दों के द्वारा कथ्य का बिंबात्मक प्रस्तुतीकरण ही शब्दचित्र की संज्ञा पाता है । रामवृक्ष बेनीपुरी का 'गेहूँ और गुलाब' इसका एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण है ।

रिपोर्ताज : रिपोर्ताज एक ऐसी गद्य विधा है, जिसमें रिपोर्ट यानी समाचार बनने लायक किसी विषय का आँखों देखा सांगोपांग वर्णन प्रस्तुत किया जाता है । यह भी एक आधुनिक विधा है । इसमें कल्पना तत्त्व लगभग शून्य होता है । इसमें लेखक की कलात्मक क्षमता को संवेदनशीलता तथा यथार्थबोध के साथ ही नैतिक बोध भी बल प्रदान करता है । रांगेय राघव, फणीश्वरनाथ रेणु, धर्मवीर भारती और निर्मल वर्मा के रिपोर्ताजों को विशेष लोकप्रियता मिली है । जॉन रीड के रिपोर्ताज 'दस दिन जब दुनिया हिल उठी' ने अंतरराष्ट्रीय ख्याति पाई थी ।

यात्रावृत्तांत : स्मृतिमूलक वैयक्तिक विधाओं में यात्रावृत्त एक महत्त्वपूर्ण विधा है । रचनाकार किसी यात्रा विशेष के क्रम में प्राप्त अनुभूतियों तथा स्थान विशेष की विशिष्टताओं का जो संस्मरणात्मक लेखन करता है, उसे ही यात्रावृत्तांत कहा गया है । यह यात्रा के सामान्य ब्यौरे से भिन्न होता है । इसमें लेखक की अनुभूतियाँ तथा उनका प्रस्तुतीकरण विशेष महत्त्व रखता है । कहा जा सकता है कि यात्रावृत्तांत लेखक की सौंदर्यचेतना तथा वैचारिक उच्चता का सबसे प्रामाणिक दस्तावेज होता है । इस विधा में राहुल सांकृत्यायन, देवेंद्र सत्यार्थी, यशपाल, अज्ञेय, रांगेय राघव, निर्मल वर्मा, रामवृक्ष बेनीपुरी, अमृतलाल वेगड़, नेत्रसिंह रावत, पंकज बिष्ट आदि के नाम प्रमुख हैं ।

निबंध : उस साहित्यिक गद्य रचना को निबंध कहा जाता है, जिसमें किसी विषय से संबंधित विचारों को उद्देश्य विशेष से एक बंध के रूप में प्रस्तुत किया जाता है ।

निबंध विचार प्रधान विधा है । इसमें बुद्धि तत्त्व प्रधान होता है । इसका प्रारंभ वैयक्तिक निबंध के रूप में हुआ था । सोलहवीं शताब्दी में फ्रांसीसी लेखक मांतेन ने इस विधा में पहली रचना की थी और बताया था कि यह मुक्त मन की गद्यात्मक अभिव्यक्ति है । परंतु बाद में गंभीर विषयों पर व्यवस्थित रूप में विचार विश्लेषण-संप्रेषण से मुक्त निबंध भी लिखे जाने लगे । उन्हें वैचारिक निबंध कहा गया । इस तरह निबंध के दो प्रमुख भेद हैं - (क) वैयक्तिक निबंध (ख) वैचारिक निबंध ।

वैयक्तिक निबंध : इन्हें ललित निबंध भी कहा जाता है । ये मुक्त मन की उन्मुक्त वैचारिक अभिव्यक्ति होते हैं । इनमें निबंधकार प्राय: अपारंपरिक और अत्यंत साधारण विषयों को चुनता है और विनोदपूर्ण मुक्त मनोदशा में उसपर टिप्पणियाँ करता चला जाता है । इस तरह अनायास ही वह अत्यंत गंभीर निष्कर्षों की व्यंजना कर जाता है । मन की मुक्तता में निबंधकार प्राय: मूल विषय से बहुत दूर भी जा पड़ता है, परंतु रोचकता बाधित होने की सीमा के पूर्व ही वह लौट आता है । यही कारण है कि इस निबंध को हिंदी में ललित निबंध के रूप में ख्याति तथा स्वीकृति मिली है । बालकृष्ण भट्‌ट, प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुंद गुप्त, चंद्रधरशर्मा गुलेरी, शिवपूजन सहाय, हजारीप्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय आदि हिंदी के प्रमुख ललित निबंधकार हैं ।

वैचारिक निबंध : वैचारिक निबंध उसे कहा जाता है, जिसमें किसी विषय पर पूर्णत: गंभीर भाव से वस्तुनिष्ठ विचार-विश्लेषण प्रस्तुत किया जाता है । आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंध वैचारिक निबंध के श्रेष्ठ उदाहरण हैं । उन्होंने सूत्रात्मक कथन तथा उसके पल्लवन-प्रतिपादन की निगमन शैली का बड़ा ही सफल प्रयोग किया है । विषय की दृष्टि से आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी में ज़ो विविधता देखी जाती है उसके दर्शन शुक्लजी में नहीं होते । गंभीर वैचारिक निबंधों के लेखक के रूप में श्यामसुंदर दास तथा गुलाबराय ने भी अच्छी प्रसिद्धि पाई थी ।

व्यंग्य : व्यंग्य हिंदी गद्य साहित्य की आधुनिक विधाओं में एक है । व्यंग्य उस लघु आकार वाले गद्यरूप को कहा जाता है, जिसमें लेखक व्यंजना शक्ति के सहारे कथ्य का प्रस्तुतीकरण करता है । व्यंग्य का प्रयोग कविता, कहानी तथा निबंध तीनों में होता रहा है । लेकिन वर्तमान में इसे एक स्वतंत्र विधा के रूप में स्वीकार कर लिया गया है । व्यंग्य के दो भेद दिखाई पड़ते हैं - कथात्मक तथा निबंधात्मक । हिंदी व्यंग्यकारों में सर्वश्रेष्ठ माने जानेवाले हरिशंकर परसाई ने प्राय: कथात्मक व्यंग्य लिखे हैं । हिंदी के अन्य व्यंग्यकारों में शरद जोशी, श्रीलाल शुक्ल, ज्ञान चतुर्वेदी आदि उल्लेखनीय हैं । व्यंग्य का उल्लेखनीय संयोग ललित निबंधों में भी देखा जाता है ।

डायरी : मनुष्य की विवेकशीलता उसे बाह्य जगत के साथ अपने अंतर्लोक में भी झाँकने और उसपर कुछ टिप्पणी करने के लिए प्रेरित करती है । यहाँ वह बिलकुल अपने 'निज' में केंद्रित होता है । इस अवस्था में अपने चिंतन तथा अनुभवों को वह जिस गद्यात्मक रूप में प्रस्तुत करता है, उसे डायरी कहते हैं । डायरी शतप्रतिशत स्वांत:सुखाय रचित होनेवाली विधाओं में सर्वश्रेष्ठ होती है । डायरी नामक साहित्यिक विधा जब लेखक की अपनी अनुभूतियों से बाहर निकलती है तो वह भी वस्तुनिष्ठ स्वरूप धारण कर लेती है । प्रसिद्ध कवि गजानन माधव मुक्तिबोध की डायरी इसका उदाहरण है ।

डायरी में भाषा की स्वाभाविकता अपेक्षित होती है फिर भी उसमें और व्यक्त विचारों में प्राय: आ

जानेवाली असंबद्धताओं को क्षम्य माना जाता है । उसकी यही विशेषता उसे सामान्य लेख या निबंध से अलग करती है । अज्ञेय की 'शाश्वती', 'भवंती', 'अंतरा' के अतिरिक्त मलयज की डायरी इस विधा की उत्कृष्ट कृतियाँ हैं ।

पत्र साहित्य : आधुनिक हिंदी साहित्य में पत्राचार ने भी अपनी स्वतंत्र पहचान बनाई है । पत्र साहित्य वैयक्तिकता से, विषय के स्तर पर, सर्वथा मुक्त रहता है, फिर भी उसमें लिखनेवाले की वैयक्तिक सोच तथा संवेदनशीलता का प्रत्यक्ष परिचय मिलता है । यही कारण है कि इस गद्य विधा में भाषा की स्वाभाविकता पूरी तरह निखरकर सामने आ जाती है । साहित्य, राजनीति एवं समाज के विभिन्न क्षेत्र के व्यक्तियों के पत्र इस विधा के उदाहरण बनते हैं । महात्मा गाँधी, भगत सिंह, प्रेमचंद, निराला, रामविलास शर्मा, केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, नामवर सिंह आदि के पत्रों ने पाठकों में खासी प्रतिष्ठा पाई है ।

साक्षात्कार : आधुनिक हिंदी साहित्य की नूतन विधाओं में साक्षात्कार उल्लेखनीय महत्त्व रखता है । किसी व्यक्ति के संबंध में विशेष परिचय प्राप्त करने या विषय विशेष पर उसके दृष्टिकोण का उद्घाटन करने के लिए उससे प्रश्नोत्तर का जो क्रम चलाया जाता है, उसे साक्षात्कार कहा जाता है । इस विधा को वार्ता, वार्तालाप, बातचीत और भेंटवार्ता कहने का प्रचलन भी विकसित हुआ है । साक्षात्कार प्राय: पत्र-पत्रिकाओं के लिए लिए जाते हैं और उनका संपादित स्वरूप प्रकाशित किया जाता है। पुस्तक रूप में भी कुछ साक्षात्कार प्रकाशित हुए हैं । अज्ञेय का 'अपरोक्ष' ऐसा ही एक उदाहरण है। इस विधा में उत्तर देनेवाला अनिवार्यत: एक होता है जबकि प्रश्न करने वाला एक भी हो सकता है और अनेक भी । इसका एक बातचीत वाला स्वरूप इस रूप में भी विकसित हुआ है कि अनेक उपस्थित लोगों में प्रश्नकर्ता या उत्तरदाता की भूमिका में कोई नहीं होता । सब किसी विषय विशेष पर सामान्य बातचीत के रूप में विमर्श करते हैं ।

आलोचना : किसी कृति की मूल्यवत्ता के परीक्षण के लिए उसमें निहित विशेषताओं तथा व्यंजित प्रभाव का मूल्यांकन करना आलोचना कहलाता है । इसे समालोचना भी कहा गया है । आलोचना या समालोचना शब्दों को आधुनिक काल में विशेष प्रचलन मिला है । आलोचक अपनी व्यक्तिगत रुचि-प्रकृति, परिवेश और साहित्यिक मर्यादा तीनों की सापेक्षता में सिद्धांत तथा व्यवहार दोनों में सक्रियता दिखाता है ।

स्वरूप की दृष्टि से आलोचना के दो भेद देखे जाते हैं – सैद्धांतिक तथा व्यावहारिक । जिसमें साहित्य के स्वरूप, तत्त्व, गुण, दोष, प्रासंगिकता आदि के प्रतिमान का सिद्धांत निरूपण होता है उसे सैद्धांतिक आलोचना कहा जाता है । हिंदी में रामचंद्र शुक्ल की 'रसमीमांसा', नगेंद्र का 'रस सिद्धांत', मुक्तिबोध का 'नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र', रामविलास शर्मा का 'आस्था और सौंदर्य' तथा नागवर सिंह की 'इतिहास और आलोचना' सैद्धांतिक आलोचना की प्रमुख पुस्तकें हैं।

साहित्यशास्त्र के मान्य सिद्धांतों के आधार पर किसी कृति का जो विश्लेषण-मूल्यांकन किया जाता है उसे व्यावहारिक आलोचना कहा जाता है । आचार्य शुक्ल द्वारा जायसी, सूर और तुलसी पर महत्त्वपूर्ण व्यावहारिक आलोचनाएँ लिखी गई हैं । 'सूरदास' (हजारीप्रसाद द्विवेदी), 'कामायनी : एक पुनर्मूल्यांकन' (मुक्तिबोध), 'आधुनिक साहित्य' (नंददुलारे वाजपेयी), 'प्रेमचंद और उनका युग' (रामविलास शर्मा), 'छायावाद' (नामवर सिंह), 'फिलहाल' (अशोक वाजपेयी) आदि व्यावहारिक आलोचना के महत्त्वपूर्ण उदाहरण हैं ।

समीक्षा : व्यावहारिक आलोचना का एक आधुनिक उल्लेखनीय स्वरूप समीक्षा है । समालोचना किसी (प्राय: नवप्रकाशित) पुस्तक की विशेषताओं का परिचय कराने के लिए लिखी जाती है उसे समीक्षा कहा जाता है । साहित्यिक पत्रकारिता ने इस विधा को विशेष प्रोत्साहित किया है । इस विधा का विकास नवप्रकाशित पुस्तक परिचय से हुआ है ।

पत्र-पत्रिकाएँ : आधुनिक साहित्य में जिन नई विधाओं का विकास हुआ है उनमें पत्र-पत्रिकाओं का उल्लेखनीय स्थान है । कहा जा सकता है कि आधुनिकता के आगमन तथा विकास में पत्र साहित्य का सहयोग सबसे बड़ा रहा है । इसके अनेक रूप हैं जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं -

1. राजनीति, समाज, संस्कृति, साहित्य, विज्ञान आदि सभी क्षेत्रों से संबंधित समाचारों वाले वे पत्र समाचारपत्र कहे जाते हैं जिनका प्रकाशन दैनिक या साप्ताहिक होता है और उनके पन्ने पूरे फर्मे के आकार में बिना जिल्दबंद प्रसारित कर दिए जाते हैं । आजकल इन्हें प्रिंट मीडिया का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण रूप माना जाता है ।

2. किसी दल, संगठन या संस्था की ओर से निकाले जाने वाले ऐसे दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक या मासिक पत्र 'मुखपत्र' कहे जाते हैं । मुखपत्रों पर उसके संचालक दल का प्रत्यक्ष या घोषित अनुशासन होता है ।

3. पाक्षिक, मासिक या त्रैमासिक पुस्तकाकार रूप में यानी जिल्दबंध रूप में प्रकाशित होने वाले पत्र साहित्य को पत्रिका कहा जाता है । पत्रिकाओं में प्राय: लेख रूप में सामग्री होती हैं । राजनीति, समाज, संस्कृति, साहित्य, विज्ञान, खेल, फिल्म आदि विविध क्षेत्रों से संबंधित पत्रिकाएँ निकलती हैं । इंडिया टुडे, विज्ञान प्रगति, कुरुक्षेत्र, आजकल, आलोचना, वामा, क्रिकेट सम्राट, फिल्मी दुनिया आदि पत्रिकाएँ हैं ।

साहित्य के अन्य रूप

साहित्य के अन्य रूपों में **अभिनंदन ग्रंथ, भूमिका, संपादकीय, साहित्येतिहास** आदि भी वर्तमान साहित्य जगत में पूरे महत्त्व के साथ लिखे जा रहे हैं ।

अभिनंदन ग्रंथ किसी महान व्यक्ति के जीवन काल में ही उसके सम्मान में प्रकाशित पुस्तक को कहा जाता है । उसमें उस व्यक्ति की विभिन्न विशेषताओं को उद्घाटित करने वाली अलग-अलग रचनाएँ होती हैं । उनमें शोधपरकता तथा भावोद्गार दोनों होते हैं । **भूमिका** उस लेख को कहा जाता है जो किसी पुस्तक में गृहीत-विवेचित विषय का परिचय तथा महत्त्व बताने के लिए होता है । इसे प्रस्तावना या प्राक्कथन भी कहा जाता है । इसे प्राय: स्वयं लेखक या संपादक लिखता है और कभी कोई अन्य अधिकारी भी । **संपादकीय** किसी पत्र या पत्रिका के प्रत्येक अंक में लिखा जानेवाला लेख होता है जो उस अंक के कथ्य तथा उद्देश्य को व्यक्त करता है । **साहित्य का इतिहास** मूलत: इतिहास लेखन ही है । इसमें साहित्य और उसके अंगों-उपांगों का विकासक्रम प्रस्तुत किया जाता है । इसके लेखक को अपने विवेचन में इतिहासबोध, शोध दृष्टि तथा आलोचनात्मक विवेक तीनों का परिचय देना पड़ता है ।

◆ ◆ ◆